कुलुस्सियों
(Colossians)

१,२ **यहोवा** परमेश्वर की इच्छा से यीशु मसीह के प्रेरित पौलुस और हमारे भाई तिमोथी की ओर से **कुलुस्से** में रहनेवाले
मसीह में पवित्र और विश्वसनीय लोगों को हमारे स्वर्गिक पिता और यीशु मसीह से असीम कृपा तथा शान्ति मिले ।
३,४ **हम** प्रभु यीशु मसीह और उनके पिता को धन्यवाद देते हुए तुम्हारे लिए बिनती करने में लगे हुए हैं। **हमने** तुम्हारे उस
५ प्रेम के विषय जो सब पवित्र लोगों के लिए है और उस विश्वास के बारे में जो मसीह यीशु में है, सुना है। **यह** उस आशा
के कारण है जो तुम्हारे लिए स्वर्ग में रखी हुयी है । तुमने इस आशा के विषय में शुभ-संदेश के सत्य वचन द्वारा पहले
६ ही से सुना था । **जो** वचन पहले तुम्हें दिया गया है, जिसे अन्य लोगों को भी दिया गया, संसार में इसका प्रभाव दिख
रहा है। जबसे तुमने इस शुभ संदेश को सुना और सच में यहोवा परमेश्वर की दया को जाना है यह तुममें भी बढ़ता जा रहा
७ है। **इस** शुभसंदेश/आशा, जिसके विषय तुमने इपाफ्रास से सुना, वह हमारा सहकर्मी और विश्वासयोग्य सेवक है ।
८,९ **उसने** पवित्र आत्मा में तुम्हारे प्रेम के विषय हमें बताया है। **इसी** कारणवश, हम ने भी जिस दिन से यह सुना है, तुम्हारे
लिए लालसा करने और प्रार्थना में नहीं चूकते, ताकि तुम यीशु की इच्छा की पहिचान जो पूर्ण ज्ञान और आत्मिक समझ
१० के साथ है, भरपूर होते जाओ। **तुम्हारा** बर्ताव यीशु को पसन्द आनेवाला हो, हर अच्छे काम में फलदायक हो और

१:१ ***"भेजे हुए प्रेरित"***- रोमि १:१; गल १:१ "तिमोथी" -

१:२ कुलुस्से इफिसुस से पूर्व लगभग १६० कि.मी. दूर एक छोटा सा शहर था । यह तुर्किस्तान का एक भाग था । यह लौदीकिया के पास था ।

१:३,४ रोमि १:८; इफि. १:१५,१६ से तुलना करें ।

१:५ ***"आशा"*** - यह उस आशा के विषय में है, जिसे विश्वासी एक दिन प्राप्त करेगा । यह वह आशा नहीं है जो उनके भीतर अभी है । पद २७; तीतुस १:२; २:१३ से तुलना करें ।

"रखी हुयी है"- १ पत १:४

"शुभ संदेश" - रोमि १:१६; १ कुरि. १५:१-८

१:६ ***"प्रभाव"*** - मत्ती १३:८; मरकुस ४:२६-२९ । शुभ संदेश मुक्ति के लिए परमेश्वर की ताकत है (रोमि १:१६) जब साफ-साफ तरीके से, साहस से और ईमानदारी इसे बताया जाता है, इसका परिणाम दिखता है ।

"जाना है" ज्ञान और परिणाम (फलदायकता) के बीच के सम्बन्ध को देखें । मत्ती १३:२३ से तुलना करें बीच के सम्बन्ध को देखें । मत्ती १३:२३ से तुलना करें । ***"असीम दया"*** यूहन्ना १:१४,१६; रोमि १:७; इफि २:८,९ के नोट्स देखिए ।

१:७ ***"इपाफ्रास"*** - ४:१२; फिलेमोन २३। ये पद मसीह के इस सेवक के बारे में सब कुछ बताते हैं ।

"सेवक"- रोमि. १:१; ६:१८,२२।

"विश्वासयोग्य सेवक" से बढ़कर और क्या कुछ कहा जा सकता है ?

१:८ ***"पवित्र आत्मा में तुम्हारे प्रेम"*** - रोमि ५:५ । हमारे पास मात्र स्वर्गिक पिता का प्यार (यूनानी भाषा में ***"अगापे"***-१ कुरि. १३-१ पर नोट्स देखे) उन्हीं के द्वारा हो सकता है । इसे सारी पृथ्वी पर सच्चे विश्वासियों में देखा जा सकता है ।

१:९ ***"प्रार्थना में नहीं चूकते"*** विश्वासियों के लिए प्रार्थना का यहाँ एक और नमूना है - इफि. १:१७-१९; ३:१६-१९; फिलि १:९। इनमें से किसी भी बात में वह भौतिक बातों के लिये बिनती नहीं करता है उसकी इच्छा थी कि वे बुद्धि, समझ, शक्ति और प्रेम प्राप्त करें । आइए, हम इसी को अपना नमूना बनाएं ।

"यीशु की इच्छा की पहचान" - रोमि. १२:२ वह ऐसी प्रार्थना इसलिए करता है क्योकि वह जिन गुणों को उनमें देखना चाहता है पद १० वे सभी इस पर निर्भर हैं । हम सृष्टिकर्ता की इच्छा को तभी पूरा कर सकते हैं, जब हम उस इच्छा को जानते हैं ।

"पूर्ण ज्ञान और अधिक समझ" यह इस पत्र का एक विषय भी है - पद २८;२,३; ३:१६ । केवल परमेश्वर यह दे सकते हैं - इफि १:१७। शिक्षा या दर्शन शास्त्र इसे उत्पन्न नहीं कर सकता । बाइबल या परमेश्वर के बारे में जानने से बढ़कर है । यह दोनों स्वर्ग से ही प्राप्त होते हैं और इन्हें प्राप्त करने के लिए हमें स्वर्गिक पिता में लगन होनी चाहिए । तुलना करें अय्यूब २८:१२-२८; नीति २:१-६; १कुरि १:२०, २५,३०; २:१०-१४ ।

१:१० ***"यीशु को पसन्द आनेवाला"***-इफि. ४:१, १थिस्सु. २:१२ । बुद्धि और समझ अपने आप में लक्ष्य नहीं है । हमें जैसा जीना चाहिए वे हमें उसके योग्य बनाती हैं । यदि ऐसा नहीं होता है, तो वह बुद्धि कहलाए जाने योग्य नहीं ।

"उन्हें हर बात में खुश करो"- २ कुरि ५:९; गल. १:१०; थिस्सु. २:४१ यदि हम अपने आप को खुश करना चाहेंगे तो यीशु को कभी नहीं कर सकेंगे । जैसी जीवन शैली यीशु की थी, हमारी भी होनी चाहिए -फिलि २:५, यूहन्ना ८:२९ । हम क्या चाहते हैं या क्या नहीं चाहते, हमें क्या पसन्द है और क्या नहीं; इस पर हमारे कार्यों को निर्भर नहीं होना चाहिए - मत्ती १०:३८,३९। यदि हम इस पद के आधार पर जिएँ, तो,स्वर्गिक पिता के अनुसार ही हमारा जीवन होगा । (जैसा दाऊद का था - १ शमूएल १३:१४ पर नोट्स देखिए ।)

"फल दायक" - यूहन्ना १५:१-८ ।

११ यहोवा परमेश्वर के ज्ञान में बढ़ते हुए उन्हें हर बात में खुश करो। **यहोवा** परमेश्वर की तेजोमय शक्ति से मज़बूती पाकर, आनन्द
१२ के साथ पूरी सहनशीलता और धीरज से स्वर्गिक पिता को धन्यवाद देते रहो, **जिन्होंने** हमें इस लायक बनाया कि पवित्र लोगों
१३ के साथ प्रकाश में, मीरास में हिस्सेदार हो सकें । **स्वर्गिक** पिता ही हमें अन्धकार के शिकंजे से छुड़ाकर, हमें अपने प्रिय
१४,१५ बेटे के राज्य में लाए हैं। **जिनमें** हमें यीशु के रक्त के व्दारा आज़ादी या अपराधों की क्षमा मिली है। **जो** अदृश्य यहोवा
१६ के प्रतिरूप और सारी सृष्टि में सर्वश्रेष्ठ हैं । **उन्हीं** के व्दारा सब कुछ, चाहे वह स्वर्ग का है, या पृथ्वी का, दिखने वाला
या न दिखनेवाला, चाहे सिंहासन या राज्य या प्रधानताएं या शक्ति, सब कुछ उन्हीं के व्दारा और उन्हीं के लिए बना है ।

"परमेश्वर के ज्ञान में बढ़ते हुए" मात्र परमेश्वर की इच्छा के शान में नहीं लेकिन स्वयं परमेश्वर के ज्ञान में। फिलि ३:१०, २ पत ३:१८ से तुलना करें।

१:११ ***"मजबूती पाकर"*** इफि ३:१६; फिलि ४:१३। "तेजोमय" शक्ति सृष्टिकर्ता की वह शक्ति है जो सच्चा आत्मिक बल दे सकती है । पौलुस क्यों चाहता था कि विश्वासियों को यह शक्ति और बल मिले ? इसलिए कि वे अद्‌भुत काम कर सकें ? कि वे बड़े संदेश देनेवाले हो जाएं ? नहीं - इसलिए कि वे कठिनाईयों को सह सकें, धीरज और आनन्द रखें । अपने छोटे स्थान में रहकर भलाई का जीवन जीकर परमेश्वर को सम्मान दे सकें ।

"सहनशीलता और धीरज" - रोमि ८:२५; १ कुरि १३:४; २कुरि १:६; गल ५:२२; इफि. ४:२; १थिस्सु ५:१४; इब्रा. ६:१२; १०:३६; १२:१; याकूब ५:१० ।

"आनन्द" फिलि. १:४; ३:१; ४:४।

१:१२ ***"धन्यवाद"*** इस पत्र में यह विषय बार-बार दोहराया गया है (२:७; ३:१५,१७; ४:२) पूरी बाइबल में भी

"लायक बनाया" - परमेश्वर की मीरास हासिल करने के लिए उन्होंने कुछ नहीं किया । यह मनुष्य के लिए असंभव है (रोमि ३:१६,२०; इफि २:१-३; यिर्म. १३:२३) । आत्मा के नए जन्म के बाद ही पिता की सन्तान बनने से यीशु के साथ मीरास के हकदार बनते हैं - यूहन्ना १:१२,१३; ३:३-८; रोमि ८:१६,१७,इफि ४:१० ।

"मीरास" इफि १:१४, १ पत. १:४ ।

"प्रकाश में" - परमेश्वर और मसीह का प्रकाश, महिमा का प्रकाश - प्रका २१:२३,२४ ।

१:१३ यहाँ दो भिन्न प्रकार के राज्य हैं। प्रत्येक व्यक्ति इनमे से किसी एक में है।

"अंधकार" - प्रेरित २६:१८; लूका २२:५३; इफि. ६:१२; यूहन्ना ३:१६,२० । अन्धकार के राज्य का शासक शैतान है । यीशु प्रकाश के राज्य का शासक हैं । मत्ती ४:१७ में परमेश्वर के राज्य पर नोट्स देखें । वह लोगों को आज़ाद करके अपने राज्य में लाते हैं । ऐसा वह अपनी बड़ी शक्ति और प्रकाश देकर अपनी सन्तान बनाने के द्वारा करते हैं । (२ कुरि ४:४-६; इफि ५:८)। यहोवा परमेश्वर का यह कार्य सारे विश्व में हो रहा है।

"अपने प्रिय बेटे" - मत्ती ३:१७

१:१४ रक्त के द्वारा आज़ादी या इफि १:७
अपराधों की क्षमा

१:१५ ***"जो"*** का अर्थ है यीशु मसीह

"अदृश्य यहोवा के प्रतिरूप" परमेश्वर आत्मा हैं और उन्हें शारीरिक आँखों से नहीं देखा जा सकता (यूहन्ना १:१८; तिमो. १:१७; ६:१६; इब्रा ११:२७) । यीशु ने दिखा दिया कि परमेश्वर कैसे हैं । मानव रूप में वही परमेश्वर के समान हैं - २:६; यूहन्ना १:१,१४; १४:६; २ कुरि ४:४; इब्रा १:३ ।

"सर्व श्रेष्ठ" अनेक अनुवादों में प्रथमफल शब्द इस्तेमाल किया गया है, जिसका अर्थ है सबसे महान सार्वभौमिक रोमि ८:२६; इब्रा १:६; १२:२३; भजन ८६:२७। पिता का स्वभाव पुत्र में है । वह सदाकाल के लिए हैं । जैसे परमेश्वर की शुरूआत नहीं है, उनकी भी नहीं है । वह कभी ***"उत्पन्न"*** नहीं हुए । यहोवा परमेश्वर के बारे में यहूदी लोग कह सकते थे - कि ओल्ड टेस्टामैन्ट यहोवा परमेश्वर 'प्रथमफल' हैं क्योंकि वह ऐसे सृष्टिकर्ता हैं जिन्हें किसी ने नहीं बनाया । यहां पौलुस कह रहा है कि यीशु सारी सृष्टि के ऊपर स्वामी हैं। अगले पद से स्पष्ट है कि इसका अर्थ यही है । लूका २:११ और फिल २:६ में नोट्स और पद देखें ।

१:१६ ***"लिए"*** मसीह को ***"पहलौठा"*** कहा गया है, क्योंकि सारी सृष्टि उन्हीं के द्वारा उत्पन्न हुयी (यूहन्ना १:३; १ कुरि. ८:६; इब्रा १:२; उत्पत्ति १:१) उन्हें प्रथमफल इसलिए नहीं कहा गया है क्योंकि वह पहले उत्पन्न हुए (या कमी उत्पन्न भी हुए) । इसलिए कि वह स्वयं हर वस्तु के बनाने वाले हैं, यह स्पष्ट है कि उनकी सृष्टि नहीं हुयी ।

"उनके लिए" केवल एक सच्चे परमेश्वर के लिए कहा जा सकता है कि सृष्टि उन्हीं के लिए है । यूनानी शब्दों का अनुवाद रोमि ११:३६ में है ***"उन्हीं के लिए"*** । वहाँ वे मात्र परमेश्वर की ओर इशारा करते हैं । यीशु छोटे ईश्वर नहीं है जो बड़े ईश्वर द्वारा बनाए गए । वह स्वयं परमेश्वर हैं ।

"सिंहासन" - प्रका. ४:४ से तुलना करें ।

१७,१८ **वह** सृष्टि से पहले थे और उन्हीं के व्दारा सब कुछ संभाला जाता है। **वह** देह अर्थात मंडली के सिर हैं, वही प्रारम्भ और
१९ मरे हुओं में से जी उठनेवालों में पहिलौठे (प्रथम) हैं, ताकि हर बात में सर्वश्रेष्ठ हों । **इसलिए** स्वर्गिक पिता को यह पसन्द
२० आया कि सारी भरपूरी यीशु में निवास करे। **मैं** कहता हूँ : चाहे पृथ्वी की, चाहे स्वर्ग की, सब का मेल यीशु के क्रूस पर
२१ बहे रक्त के द्वारा स्वयं से करा लिया । **तुम** भी एक समय अपने बुरे कार्यों व्दारा मन में बिछड़े हुए और दुश्मन थे,
२२ **लेकिन** यीशु ने अपने माँस-लोहू की देह में तुम्हें किसी भी बदनामी से बढ़कर अपनी निगाह में पवित्र और निर्दोष प्रस्तुत
२३ करने के लिए अब तुमसे मेल कर लिया गया है। **तुम** विश्वास में स्थिर होते, जड़ पकड़ते और जो शुभसंदेश तुमने सुना
है, उसकी आशा रखते हो जिसका इस आकाश के नीचे प्रत्येक प्राणी को संदेश दिया गया, और जिसका मैं पौलुस सेवक
२४ भी बना । **अब** मैं उन क्लेशों के कारण आनन्दित हूँ, जो तुम्हारे लिए मुझे होते हैं और मसीह के क्लेशों की कमी उनकी

"राज्य प्रधानताएं" - इफि १:२१; ३:१०

१:१७ ***"सृष्टि से पहले"*** - मसीह जो परमेश्वर के बेटे हैं, सृष्टि के एक भाग नहीं थे । सृष्टि से पहले वह थे और उनके द्वारा ही सृष्टि का निर्माण हुआ ।

"संभाला जाता है" - इब्रा १:३ से तुलना कीजिए । सारी सृष्टि को तहसःनहस हो जाने से वही रोके रहते हैं । वही ऐसी शक्ति हैं जो सबकुछ को एक सतुंलन में रखते हैं । क्या परमेश्वर को छोड़ किसी और के बारे में ऐसा कहा कहा जा सकता है ?

१:१८ ***"सिर"***-इफि १:२२,२३

"देह" - रोमि १२:५; १ कुरि. १२:१२,१३

"मण्डली" - मत्ती १६:१८

"प्रारम्भ" - यूनानी शब्द का अर्थ है ***"स्त्रोत"*** या जिसको पहला स्थान मिला है । मसीह वह हैं, जिनमें से उनकी मण्डली निकल कर आयी है और उन्हें सबसे ऊँचा स्थान मिला है ।

"मृतकों में से जी उठने वालों में पहिलौठे' - प्रका. १:५ इसका अर्थ मात्र यह नहीं है कि सबसे पहले मौत पर जीत प्राप्त करने वाले मसीह ही थे। मौत पर विजय पाने से अधिक यहाँ पर अर्थ है। इसका अर्थ है कि यीशु का सबसे ऊँचा स्थान है । उनके समान जो लोग मरने के बाद जी उठेगे, उन सब के ऊपर वह महान हैं । रोमि. १४:६ से तुलना करें ।

"सर्वप्रथम" - इफि. १:२२; फिलि २:६-११ । मसीह को प्रधानता मिलनी चाहिये और वे ही उसके हकदार हैं ।

१:१९ सृष्टिकर्ता की सारी भरपूरी मानव यीशु मसीह में थी २:६; यूहन्ना १:१,१४।

१:२० ***"मेल"*** परमेश्वर से दूर होकर सारा संसार पाप में गिर चुका था (रोम ३:१६,२०), परमेश्वर का क्रोध मनुष्य की बुराई के खिलाफ भड़क चुका था (रोमि १:१८)। स्वर्ग और पृथ्वी के बीच कोई मित्रता नहीं थी । महान परमेश्वर ने मेल कराने के लिए यीशु को भेज दिया । ऐसा यीशु ने रक्त के बलिदान से विश्व के पापों को हर लेने के लिए किया-यूहन्ना १:२६; रोमि ५:१०, २ कुरि. ५:१६; इफि. २:१६

१:२१ ***"बिछड़े हुए"*** इफि २:१२; ४:१८।

"दुश्मन" - रोमि ५:१०; याकूब ४:४

"मन में" - उन्हें यह नहीं मालूम था कि वे सृष्टि के स्वामी के शत्रु हैं। क्योंकि उनके विचार और मन की इच्छाएँ परमेश्वर विरोधी थीं, वे परमेश्वर के शत्रु थे । तुलना करें रोमि ८:५-८

"बुरे कार्यो द्वारा"- पाप से मनुष्य परमेश्वर का शत्रु बन जाता है ।

१:२२ पद २० इफि २:१६-१८

"पवित्र" इफि १:४; ५:२५-२७

"बदनामी से बढ़कर" - १ कुरि. १:८ रोमि ८:३३

१:२३ ***"यदि"***- पौलुस यह नहीं कह रहा है कि शायद विश्वासी, विश्वास में बने रहें । वह यह कहना चाह रहा है कि सच्चे विश्वासी क्या हैं और क्या करते हैं । उनका विश्वास में बना रहना यह दिखाता है, कि उनका मेल परमेश्वर से हो चुका है। तुलना करें १ कुरि १५:२; इब्रा ३:६,१४; १०:३८,३६; यूहन्ना १०:२७; लूका २२:३२; १ यूहन्ना २:१६

"स्थिर होते जड़ पकड़ते"- सच्चा विश्वास एक मजबूत चट्टान पर टिका होता है । १ कुरि. ३:११; इफि. २:२०) इससे विश्वासी दृढ़ हो जाते हैं ।

"आकाश के नीचे" इसका अर्थ पृथ्वी की छोर तक नहीं है या सारा विश्व भी नहीं है - मरकुस १६:१५ प्रेरित १३:४७। पौलुस उन्हें बता रहा है कि उस क्षेत्र में शुभसंदेश कितना फैल चुका था।

१:२४ ***"उन क्लेशों के कारण जो तुम्हारे लिये मुझे होते हैं"*** ४:१०,१८; २ कुरि १:५,६; इफि ३:१-१३। पौलुस दुःख इसलिए उठा रहा था क्योंकि वह शुभसंदेश देता था, लोगों को यीशु का शिष्य बनाता था और यीशु के गिरिजा (मण्डली या चर्च) को इस पृथ्वी पर बनाना चाहता था । वह आनन्दित इसलिए नहीं था क्योंकि सताव अच्छा लगता था, लेकिन इसलिए कि यीशु और उनके लोगों के लिए जी रहा था । इसे वह एक शुभ अवसर समझता था-फिलि १:२६; ३:१०, १पत ४:१३-१६ से तुलना करें।

२५ देह अर्थात कलीसिया के लिए अपने शरीर में पूरी कर देता हूँ। **वचन** के पूरा होने के लिए जिसे स्वर्गिक पिता ने तुम्हारे
२६ लिए मुझे दिया है, मुझे मंडली के लिए देखभाल करने वाले के पद के आधार पर सेवक बनाया गया है । **ऐसा** उस रहस्य
२७ के कारण है, जो युगों से छिपा था, किन्तु अब उनके पवित्र लोगों पर प्रगट हुआ है । **यहोवा** ने चाहा कि वह गैर यहूदियों
२८ के बीच इस रहस्य (मसीह महिमा की आशा) के तेजोमय धन को बताएँ । **इसलिए** हम उपदेश और चितावनी देते हैं
और सारे ज्ञान सहित हर एक मनुष्य को सिखाते हैं, ताकि प्रत्येक व्यक्ति को मसीह यीशु में सिद्ध उपस्थित करें ।
२९ **इसी** लक्ष्य के कारण उनकी सामर्थ के अनुसार, जो मुझमें शक्तिशाली रीति से कार्यशील है, तन मन लगाकर परिश्रम करता
२ हूँ । **जिन्होंने** मेरा मुँह नहीं देखा है और जो लौदीकिया में हैं, उन्हें मैं यह बताना चाहता हूँ, कि तुम्हारे लिए मुझे कितना
२ अधिक सघर्ष करना पड़ता है । **तुम** प्रेम में गठकर अपने हृदय में प्रोत्साहित हो, ताकि समझ के पूरे आश्वासन के धन,
३ परमेश्वर पिता और यीशु मसीह के रहस्य के सम्पूर्ण ज्ञान में प्रवेश कर सको । **यीशु** मसीह में बुध्दि और ज्ञान का सारा
४,५ खजाना छिपा हुआ है। **मैं** यह इसलिए कहता हूँ, ताकि भरमा देनेवाले शब्दों से तुम्हें कोई धोखा न दे सके। **हालाँकि** मैं

"कमी" क्या क्रूस पर मसीह के क्लेशों में कुछ कमी थी ? नहीं, बिल्कुल नहीं । दुनियाँ के अपराधों के लिए बलिदान क्या अधूरा था ? नहीं; पौलुस इसके विषय भी नहीं कह रहा है । यह सच है कि हमारे अपराधों के लिए मसीह एक ही बार मर गए और सब कार्य को पूरा कर डाला-यूहन्ना १९:३०; इब्रा. १०:१०,१४; १ पत ३:१८ । यीशु अभी कलीसिया को बना रहे हैं (मत्ती १६:१८, इफि २:१९-२२)। अपने सेवकों को उनके साथ कार्य करने का शुभ-अवसर दे रहे हैं । इस संसार में इसका अर्थ है समस्याएँ सताव, दुख और परेशानियाँ । वे अभी समाप्त नहीं हुयी हैं । अभी भी उनकी "कमी" है । मण्डली (चर्च या कलीसिया) के लिए और उनके साथ दुख उठाने की आशीष को वर्तमान समय में अपने सेवकों के लिए रखा है) ।

१:२६ इफि ३:२-९; रोमि १६:२५-२७।

"पवित्र लोगों पर" - रोमि १:७

१:२७ ***"धन"***-इफि ३:८ इन सभी धन की तुलना में, मनुष्य द्वारा बनाया गया हर एक संत निर्धन है ।

"मसीह यीशु में" यूहन्ना १७:२३; रोमि ८:९,१०; २ कुरि. १३:५; प्रका ३:२० ।

"महिमा की आशा" रोमि ५:२; ८:१८।यदि मसीह हम में नहीं हैं तो हमारे पास मुक्ति और परमेश्वर की महिमा को देखने का कोई ठोस आधार नहीं है।

१:२८ प्रेरित २०:२० -२४ से तुलना करें।

"सारे ज्ञान" - वह ज्ञान जो उसे परमेश्वर ने दिया था - १ कुरि. १:३०; २:७,१०,१२,१६ । वह अपनी बुद्धि पर घमण्ड नहीं कर रहा था । उसने यह प्रार्थना की कि उन्हें पूरी बुद्धि प्राप्त हो - पद ९ । वह जानता था, कि इसे पाना संभव था, क्योंकि यह उसे मिली थी । विश्वासी भी इसे पा सकते हैं-याकूब १:५।

"सिद्ध" २ कुरि. ११:२; इफि. ४:१२-१५ । मत्ती ५:४८ फिलि ३:१२,१५; इब्रा ६:१; १०:१४ ।

१:२९ पौलुस के लिए इफि ३:२० मात्र एक सिध्दांत नहीं था । देखें कि पौलुस के जीवन में परमेश्वर की शक्ति कार्य कर रही थी, किन्तु यह आसान प्रक्रिया नहीं थी । सच्चाई तो इसके विपरीत थी - इसका अर्थ था परिश्रम और संघर्ष (यही यूनानी शब्द ४:१२; लूका १३:२४, १ कुरि ९:२५ में इस्तेमाल किया गया है।)

२:१ ***"संघर्ष"*** -१:२९ चाहे विश्वासियों से पौलुस की मुलाकात हुयी हो या नहीं, वह उनके लिए मध्यस्थी में संघर्ष किया करता था । उसे यह मालूम था कि मसीह के लिए प्रत्येक विश्वासी कीमती है । वह संसार के सामने यीशु के नाम को रखता है ।

"लौदीकिया" -प्रका ३:१४

२:२ पौलुस की प्रार्थनाओं में निहित सत्य का एक और नमूना १:९।

"प्रोत्साहित"- पौलुस ने इसे आवश्यक सेवकाई समझा था।

"प्रेम में गठकर" - रोमियों १२:१०; इफि. ४:२,३; फिलि.२:२ ।

"समझ" -धन के विषय उसके विचार क्या थे यह भी देखिए । तुलना करें नीति ३:१३,१४; ८:१०,१९;१६:१६ ।

"रहस्य" - परमेश्वर से मिलने वाला प्रकाशन मत्ती १३:११ की टिप्पणी देखें ।

"परमेश्वर पिता और यीशु मसीह" - जब तक परमेश्वर न बताए, कोई भी मसीह को जान नहीं सकता । २ कुरि. ४:४-६ इसी तरह से जब तक मसीह प्रकट न करे, कोई परमेश्वर को जान नहीं सकता- मत्ती ११:१७ । मसीह और परमेश्वर पिता का ज्ञान हर प्रकार के ज्ञान से कहीं अधिक बड़ा धन है । तुलना कीजिए फिलि ३:७-११ यूहन्ना १७:३ ।

२:३ यदि हम मसीह को जानते हैं, तो हम सारी बुद्धि के स्त्रोत को जानते है । ***"सारा"*** शब्द पर ध्यान दें। असीमित बुद्धि मसीह में है । यदि हम यीशु को नहीं जानते हैं, तो हममे आत्मिक बुद्धि की कमी है । चाहे दर्शनशास्त्र का ज्ञान हो और विश्व का ज्ञान ही। देखें १ कुरि. १:२०; २१। जिसे लोग मुक्ति के लिए 'ज्ञान मार्ग' कहते हैं वह घमण्ड और कठोरता का रास्ता होता है न कि मुक्ति का ।

"छिपा हुआ" - मसीह की बुद्धि और ज्ञान सभी को समझ में नहीं आते हैं । वे सतह पर नहीं पाए जाते हैं । जिस तरह से लोग छिपे हुए खजाने की खोज करते हैं । नीति २:१-६ से तुलना करें । पूरे मन से आत्मिक समझ के लिए खोज का उदाहरण भजन ११९ में है । वे लोग प्रसन्न होंगे जो ऐसे लोगों की नकल करेंगे ।

देह में अनुपस्थित हूँ, फिर भी मैं आत्मा में तुम्हारे साथ हूँ । मैं मसीह में तुम्हारे मजबूत विश्वास की स्थिरता और
६ अनुशासन को देखकर खुश हूँ। **इसलिए,** जैसे तुमने स्वामी यीशु मसीह को स्वीकार कर लिया है, उसी तरह आगे बढ़ते
७ जाओ । **विश्वास** में मजबूती पकड़ते, जड़ पकड़कर मज़बूत होते हुए धन्यवाद में उमड़ते चलो, जैसा तुम्हें सिखाया गया
८ है, धन्यवाद में उमड़ते चलो । **सावधान** रहना, ताकि तुम्हें कोई दर्शनशास्त्र और खोखले धोखे से, जो मनुष्य की परम्परा
९ और संसार के शुरूआती ज्ञान पर आधारित है परन्तु मसीह पर नहीं, बर्बाद न कर दे । **मसीह** स्वर्गिक पिता की सारी
१०,११ भरपूरी दैहिक रीति से वास करती है। **जो** सारी प्रभुसत्ता और अधिकार के प्रधान हैं, उनमें तुम पूरे होते हो। **उन्हीं** में

२:४ अपने ***"भरमा देनेवाले शब्दों"*** से दूसरों को मजबूर करनेवाले और अपने आप को धोखा देने वाले लोग हमें दिखते हैं । ऐसे लोग मनुष्य द्वारा बनाए गए तरीकों, दर्शनशास्त्र की बातों या धार्मिक बातों को बनाते है जो बहुत सही और अच्छी लगती है । मसीह पर विश्वास, सत्य की पहचान और उससे मिलनेवाली सच्चाई के द्वारा हम अपने आप को गलत रास्तों से बचा सकते हैं ।

२:५ ***"आत्मा में"*** -१ कुरि ५:३,४ । पौलुस यह नहीं सिखा रहा है कि उसकी आत्मा देह को छोड़कर दूसरे स्थानों में जा सकती है, इसका अर्थ है उसका मन और विचार उन लोगों और उनके कामों पर लगे रहते थे। वह सूचना जो उनके बारे में उसे मिला करती थी, उससे उसे यह आशा थी कि वे कानों को अच्छे लगनेवाले तर्क से धोखे में नहीं पड़ेंगे ।

"अनुशासन" - १ कुरि १४:४० "मजबूत विश्वास की स्थिरता" इससे हमें योग्यता मिलती है, जिससे कि हम धोखेवाली शिक्षा और शैतान की प्रत्येक चलाकी के विरोध में खड़े हो सकें (२ कुरि १:२४; इफि. ६:१६; १ पत ५:६; १ यूहन्ना ५:४) ।

२:६ मत्ती १:१ में ***"मसीह"*** और ***"यीशु"*** पर और लूका २:११ में स्वामी पर जो नोट्स है उन्हें देखें । इतिहास के यीशु के बारे में उन्होंने सत्य को प्राप्त किया था । उन्होंने कुछ रहस्यमय सच्चाई को या काल्पनिक यीशु को नहीं जाना था । वे ऐसे यीशु पर विश्वास करते थे जिनके पास देह थी और जिन्हें परमेश्वर द्वारा अभिषेक दिया गया था और जो स्वर्ग से थे । यह ध्यान दें कि 'स्वामी' को उन्होंने विश्वास से स्वीकार किया था । उन्हें यही सत्य सिखाया गया था, जिस पर उन्होंने विश्वास कर भी लिया था और अपने आपको सुपुर्द किया था । इसी विश्वास से उन्हें बने रहना चाहिए (२ कुरि ५:७)

"आगे बढ़ते जाओ"-या जीवन जियो-इफि २:१० में नोट्स देखें।

२:७ ***"जड़ पकड़कर मजबूत होते हुए"*** -इफि ३:१७ से तुलना करें । पौधों और वृक्षों से विश्वासियों की तुलना की जा सकती है - मत्ती १२:३३; १३:१-३०; भजन १:३ मसीह उस अच्छी भूमि के समान हैं, जहाँ, उनकी जड़े हैं । उनकी जड़ें नीचे हैं, लेकिन धीरे-धीरे बढ़ते जा रहे हैं । वे एक इमारत के समान हैं, यीशु उनकी नेव हैं, जिसके ऊपर वे बनाए जा रहे हैं - इफि २:१६-२२, १ पत २:४,५; १ कुरि. ३:११ ।

"विश्वास में" -मसीह के सत्य में उनको और अधिक मजबूती से स्थापित होना चाहिए और विश्वास करना चाहिए।

"धन्यवाद" - इफि ५:४,२०, १ थिस्सु.५:१८

२:८ ***"सावधान रहना"*** - एक दुर्बोध खतरा था - गलत विचारधारा के द्वारा फँसने का खतरा । १६-२३ में पौलुस उस मत की बात करता है, जिसका सामना कुलुस्से के लोग कर रहे थे जिसका सामना आज हम करते हैं, समान या भिन्न हो सकते हैं, किन्तु हमें भी सावधानी बरतने की आवश्यकता है । प्रत्येक पीढ़ी में एक बात पक्की है वह यह - कोई भी दर्शन या धार्मिक विचारधारा जो यीशु मसीह को अलग रखती है, खोखली और धोखा देनेवाली है ।

दर्शन उन बातों की भूख है जिसे मनुष्य ज्ञान कहते हैं । यह तर्क एवं विवाद के द्वारा सत्य और वास्तविकता के स्वभाव को प्राप्त करने का एक प्रयास है । मसीह ही सत्य हैं और सारा आत्मिक ज्ञान उन्हीं में छिपा हुआ है । दर्शनशास्त्र के तरीके लोगों को उन तक नहीं पहुँचाएंगे । बाईबल वास्तविकता की प्रकृति का प्रकाशन है । आत्मिक बातों के विषय में जिस सत्य को परमेश्वर चाहते हैं, कि मनुष्य जाने इसी में है । दर्शन शास्त्र मात्र कल्पना है । यह सच्चे परमेश्वर तक कभी नहीं पहुँचाएगी । दर्शन शास्त्री प्रायः एक दूसरे के विरोध में कहते हैं और ऐसी बातों के विषय चर्चा करते हैं, जो उनकी बुद्धि से परे हैं और उन्हें वे नहीं जानते ।

यीशु मसीह जो परमेश्वर की बुद्धि हैं (१कुरि. १:२४), हमारे सामने खड़े हैं । उन्हें में सारी बुद्धि और ज्ञान के खजाने हैं । यह दिलचस्प बात है कि 'दर्शन' शब्द पूरी बाईबल में यहीं पर आया है । इब्रानी और यूनानी भाषा में (प्रेरित १७:१८) दर्शनशास्त्री शब्द का उपयोग मात्र एक बार हुआ है - १ कुरि १:२० । इस तरह से बाईबल के लेखक परमेश्वर की आत्मिक बुद्धि के क्षेत्र में दर्शनशास्त्र के बेफायदेमन्द को प्रगट करते हैं। यदि सृष्टिकर्ता किसी बात को अनदेखा करते हैं या उसको स्वीकार नहीं करते तो हम कह सकते हैं, कि जिन बातों को परमेश्वर हमें सिखाना चाहते हैं, उनके विषय में इसका कोई योगदान नहीं है,

"बर्बाद" यूनानी में ***"तुम्हारा शिकार न करे"*** या ***"तुम्हें बन्दी न बनाए"***

"मनुष्य की परम्परा" जो दर्शन कुलस्से के मसीहियों को परेशान कर रहा था, वह मनुष्य की परम्परा (बोली गयी या लिखी हुयी) और संसार से कुछ सीखी हुयी बातों पर आधारित था । ये दर्शनशास्त्री मात्र नींव की बातों (लेकिन शायद गहरे विचार वाली बातों पर घमण्ड करते थे) टिके हुए थे । उनकी विचारधारा मसीह पर आधारित नहीं थी, इसलिए ***"खोखला धोखा"*** थी । क्योंकि मसीह पर यह विचारधारा स्थिर नहीं थी, इसलिए सच्चा ज्ञान वहाँ नहीं था । इसलिए वह देने का वायदा कर रही थी, जिसे दे नहीं सकती थी । जैसा यह पहले सत्य था, आज भी है । आज बहुत से मत और दर्शन हैं जो कुछ परम्पराओं, पुराने धार्मिक लेखों और मात्र मनुष्य की कल्पना पर टिके हैं। क्योंकि वे मसीह को इन सबसे बाहर रखते हैं, जो परमेश्वर का सच्चा ज्ञान हैं। ये सभी मत, खोखले और धोखे वाले हैं ।

तुम्हारा ऐसा खतना हुआ है, जो हाथ से नहीं होता है, यह मसीह ब्दारा किया गया आत्मा का खतना है, जिसमें अपराधों का
१२ शरीर हटा दिया जाता है। **और** तुम बपतिस्मे में मसीह के साथ गाढ़े गए, उन्हीं में सृष्टिकर्ता के काम के ब्दारा विश्वास से जिलाए
१३ भी गए, जिन्होंने यीशु को मरे हुओं में से जिलाया है। **तुम** अपने अपराधों और अपनी देह की कमियों में मरे हुए थे, उन
१४ सारे अपराधों को क्षमा करते हुए सृष्टिकर्ता ने यीशु के साथ तुम्हें भी जिलाया । **वह** न्याय जो हमारे विरोध में था, उन
१५ सब को यीशु ने क्रूस पर ठोंक कर दूर कर दिया और पूरी तरह से मिटा दिया। **यीशु** ने प्रधानताओं और शक्तियों को लूटकर,
१६ क्रूस ब्दार उन पर जीत हासिल करके, यीशु ने उन सभी का सरेआम तमाशा बनाया । इसलिए खाने-पीने, त्यौहार मनाने,
१७ या नये चाँद को मानने या सब्त के सम्बन्ध में तुम्हारे लिए कोई दूसरा व्यक्ति निर्णय न ले । **ये** सभी आनेवाली बातों की

२:९ १:१९ देखें । इसका अर्थ यह है कि सच्चे परमेश्वर यीशु में ही होकर आए। वह सृष्टिकर्ता हैं। अलौकिक स्वभाव की सारी भरपूरी उनकी देह में हैं । फिलि २:६; लूका २:११ देखें ।

२:१० परमेश्वर की आत्मा से ***"मसीह"*** में विश्वासी स्वर्गिक पिता से जुड़े हुए हैं - यूहन्ना १७:२०-२३; रोमि ६:५; १ कुरि. १२:१२, १३; इफि १:४,७,११,१३ । इसलिए उन्हें बुद्धिमान और पवित्र जीवन के लिए जो कुछ चाहिए वह सब उन के पास मसीह में है। जो पूरापन (परिपूर्णता) उन्हें दी गयी है वह परमेश्वर की डयुटी नहीं है। मनुष्य सृष्टिकर्ता कभी नहीं बन सकता न ही उनके गुणों को हासिल कर सकता है (उत्पत्ति १:२६; भजन ८:२०; यशा ४०:६-८, १२-१६)। मसीह में परमेश्वर ने विश्वासियों को शर्तहीन कृपा, शक्ति और बुद्धि दी है। उन्हें यह बातें समझनी चाहिए और अपने लिए उन्हें प्राप्त करके इस्तेमाल करनी चाहिए।यूहन्ना १:१६-१८, इफि ३:१६ और ५:१८ से तुलना करें ।

"सिर" इफि १:२०-२३; फिलि २:९-११

२:११ ***"खतना हुआ है"*** खतने की यहूदी रीति के सच्चे आत्मिक अर्थ की ओर पौलुस इशारा कर रहा है ।
रोमि. २:२८,२९; फिलि ३:३ देखें । यूनानी में शरीर "सार्क्स"-रोमि. ७:५ की टिप्पणी देखें) को कभी भी अच्छा नहीं बनाया जा सकता है । इसे मरने की जरूरत है। हमारे स्थान पर मरने के द्वारा मसीह ने इसे मार डाला है। उन्होंने विश्वासियों के साथ इसके रिश्ते को तोड़ डाला है - ३:३, रोमि ६:६; ७:१७; ८:९ उनके पास एक नयी आत्मा है, एक नया स्वभाव है। उन्हें पुराने जीवन से अलग कर दिया गया है- ३:९,१०; २ कुरि ५:१७ । इसका अर्थ यह नहीं है, कि उनके भीतर का वास्तविक पापमय स्वभाव काम नहीं कर रहा है - रोमि ७:१७,१८; गल ५:१७ ।

२:१२ ***"बपतिस्मे में मसीह के साथ गाड़े गए"***- रोमि ६:३,४ देखिए ।

"जिलाए भी गए" इफि. २:६

"यहोवा के काम के द्वारा विश्वास से" - रोमि ४:२०,२१,२४ से तुलना करें । हम उन परमेश्वर पर भरोसा करते है, जिन्होंने मसीह को शरीरिक रीति से जिलाकर अपनी ताकत दिखायी, वही हमें आत्मिक मौत से जिलाते हैं । यूहन्ना ५:२४; रोमि १०:९,१०

२:१३ ***"मरे हुए...जिलाया"*** इफि २:१,५

"क्षमा करते हुए" - १:११४, इफि १:७

२:१४ इफि २:१५ ***"हमारे विरोध में"*** परमेश्वर का नियमशास्त्र लोगों के विरोध में इसलिए था क्योंकि, सभी एक स्तर के नीचे थे । उन्होंने इसका पालन नहीं किया था । नियमशास्त्र की यह मांग थी कि दण्ड और मौत मिले -गल. ३:१०; रोमि ३:१९; ४:१५; ७:१२-१४।

"क्रूस पर ठोंककर" मसीह ने हमारा स्थान लिया और सारे दण्ड और हमारे विरोध में नियमशास्त्र के शाप को सहा गल ३:१३ । वह नियमशास्त्र के शाप के आधीन मर गए और सभी विश्वासी उन्हीं के साथ मर चुके हैं । (जहाँ तक परमेश्वर के दृष्टिकोण का सवाल है)। क्योंकि वे नियमशास्त्र के लिए मर चुके हैं, यह तो ऐसा है कि उनके लिए नियमशास्त्र क्रूस पर चढ़ाया गया और वह मर चुका है रोमि ७:१-६।

२:१५ ***"प्रधानताओं और शक्तियों"*** यहाँ पौलुस शैतान और दूसरी दुष्ट आत्माओं की ओर इशारा करता है (इफि ६:१२) । उन्होंने क्रूस के द्वारा मसीह को नाश करना चाहा था- लूका २२:५३। इसका उल्टा हो गया, मसीह ने क्रूस की मौत और जी उठने के द्वारा उनके ऊपर जीत हासिल की और उनके वश से छुड़ा लिया यूहन्ना १२:३१, इब्रा. २:१४,१५ ।

२:१६-२३ पौलुस अब झूठे शिक्षकों के उन तरीकों के बारे में बताता है, जिसके द्वारा ***"प्रभावशाली शब्दों"*** से, वे कुलुस्से के लोगों को धोखा दे रहे थे (पद ४)

२:१६ ***"कोई दूसरा व्यक्ति"*** यहाँ वह उन यहूदियों की ओर इशारा कर रहा है जो अभी तक "लिखित नियमों को उनके शर्तों के साथ जुड़े हुए है ।" (मूसा के नियम शास्त्र -पद १४)

"खाने-पीने" लैव्य ११:१, मरकुस ७:१८,१९; प्रेरित १०:९-१६; रोमि १४:१-४ के नोट्स देखें ।

"त्यौहार"-यहाँ यहूदियों के विशेष दिनों और समयों के बारे में इशारा है । विश्वासी अब ओल्ड टैस्टामैन्ट के नियमों और रीतियों के आधीन नहीं हैं। रोमि. १४:५-८, गल ४:१०,११ में "सब्त" के विषय में नोट्स देखिए । यह उस लिखित 'नियमावली' के भाग है, जिन्हें यीशु ने क्रूस पर ठुँकवा दिया- पद १४ ।

१८ एक छाया हैं, सबसे अधिक महत्व की बात यीशु हैं । **स्वयं** की दीनता, स्वर्गदूतों की उपासना, अनदेखी बातों और अपने
शारीरिक मन के द्वारा बेकार में घमण्ड से भरने के द्वारा तुम्हें कोई व्यक्ति तुम्हारे ईनाम से तुम्हें अलग न रखे। ऐसा व्यक्ति
१९ देखी हुई बातों में लगा रहता है । वह अपनी इन्सानी समझ पर बेकार ही में घमण्ड करता है, **और** उस सिर अर्थात
यीशु को पकड़े नहीं रहता, जिससे सारी देह (मण्डली) जोड़ों और तन्तुओं के द्वारा पाली-पोसी जाकर एक होकर
२० परमेश्वर से उन्नति पाती जाती है । **क्योंकि** यदि प्रारंभिक बातों के लिए तुम मसीह के साथ मर गये, तो सांसारिक लोगों
२१,२२ के समान, उन नियमों के गुलाम क्यों बनते हो ? **यह** मत छूओ, वह मत चखो, ऐसा अमल ना करो । **ये** सभी बातें
२३ जो मनुष्यों की आज्ञाओं और सिध्दान्तों के अनुसार हैं उपयोग के साथ नाश हो जानेवाली हैं। **जहाँ** तक ज्ञान के दिखाने
या अपने चुने हुए भक्ति के तरीके, दीनता और देह को कष्ट देने की बात है, इन सब बातों में शरीर की इच्छाओं को
३ वश में करने का दृष्टि से कोई महत्व नहीं है । **यदि** तुम मसीह के साथ जिलाए गए हो, तो स्वर्गिक वस्तुओं को चाहो, जहाँ
२,३ स्वर्गिक पिता के अधिकर के साथ मसीह हैं । **पृथ्वी** की नहीं परंतु स्वर्ग की वस्तुओं पर ध्यान लगाओ । **क्योंकि** तुम पिछले

२:१७ ***"छाया"*** -इब्रा ८:५; १०:१ ।

"महत्व की" - जो सत्य मसीह का है, ओल्ड टेस्टामॅन्ट के निमय और रीति-विधियाँ उन्हीं की ओर संकेत करती हैं ।

२:१८ अब पौलुस एक और खतरे के बारे में कहता है। कुलुस्से में कुछ लोग एक झूठे धार्मिक रास्ते पर चले जा रहे थे। वे अपनी बनायी हुयी दीनता के बारे में घमण्डी थे और स्वर्गदूतों की पूजा करते थे। उनकी यह उपासना और नाम की दीनता दोनों ही उनके जीवन में थी । वे इस तरह कह सकते थे। मुनष्य स्वयं सृष्टिकर्ता तक पहुँच नहीं सकता सृष्टिकर्ता उनसे कहीं अधिक महान हैं । इतने अधिक पवित्र हैं कि मनुष्य की पहुँच उन तक हो ही नहीं सकती । इसलिए दूसरे मध्यस्थों के द्वारा मनुष्य को उनकी आराधना करनी चाहिए । ये मध्यस्थ स्वर्गदूत हैं । आज भी कुछ धार्मिक लोग इसी तरह का तर्क सामने रखते हैं । स्वर्गदूतों के बजाए वे सन्त कहलाए जानेवाले उन लोगों की पूजा करते हैं, जो मर चुके हैं। वे ऐसों को मध्यस्थ समझकर यह चाहते हैं कि वे उनके लिए प्रार्थना करें । इसके अलावा और एसे लोग हैं जो सृष्टिकर्ता की जगह दूसरे ईश्वर कहलाए जानेवालों की उपासना करते हैं । यह सब परमेश्वर के वचन के विरोध में है और बाईबल में इसका वर्णन है - निर्ग २०:१-६ यूहन्ना १४:६; १ तिमो २:५; इब्रा १०:१९:२२ ।

"ईनाम"-१कुरि ९:२४; २ तिमो २:५; जिस दौड़ में विश्वासी दौड़ रहे हैं, उसमें कोई उन्हें न रोक पाए ।यदि ऐसा होता हे तो वे उस ईनाम को खो सकते हैं जिसे वे पा सकते थे ।

"स्वंय की दीनता"-वह दीनता नहीं, जिसे पवित्र आत्मा किसी विश्वासी के जीवन में उत्पन्न करता है।

"घमण्ड" यह खुद की उत्पन्न की गई दीनता है । वह वास्तव में घमण्ड है जो बाहर से दीनता दिखती है।

"शारीरिक मन" उसकी देह का मन जो बुरा है - रोमि ८:५-७ । जिन लोगों के विषय यहाँ कहा गया है, उनका बुरा स्वभाव, और उपासना और विचार धारा उसी बुरे मन की उपज है इसके बावजूद वे अपने आप को बहुत आत्मिक समझते होंगे ।

२:१९ ***"सिर अर्थात यीशु को पकड़े नहीं रहता"***-कुलुस्से में रहने वाले झूठे शिक्षक मसीह के नियन्त्रण में नहीं थे। वे मसीह की शिक्षा में नहीं बने हुए थे । इसीलिए वे गुमराह हो गऐ थे । शायद वे यीशु के शिष्य होने का दावा करते थे किन्तु उनकी शिक्षा से स्पष्ट था कि वे नहीं थे ।

"उन्नति" - इफि ४:१६

२:२० ***"मसीह के साथ मर गए"***- रोमि ६:६,८; गल २:२० ।

"प्रारम्भिक बातों के लिए" -(पद ८; गल ४:३) वे बातें जो पुरानी सृष्टि से सम्बधित हैं न कि मसीह में नयी आत्मिक सृष्टि से ।

२:२१,२२ कुछ लोग यह समझते थे (अभी भी समझते हैं कि भोजन, पेय आदि के सम्बन्ध में नियम और तरीके आत्मिक जीवन का केन्द्र हैं । मसीह पर विश्वास करनेवाले उन सभी के लिए मर चुके हैं।)

२:२३ ***"ज्ञान के दिखाने"*** - पृथ्वी के अधिकांश लोगों को सन्तुष्ट करने के लिए यह काफी है । वे उस सच्चे ज्ञान को प्राप्त नहीं करना चाहते जो परमेश्वर से मिलता है । यह उनके पास है भी नहीं ।

"अपने चुने हुए भक्ति के तरीके"- बहुत से लोग अपने तरीके से उपासना करना चाहते हैं और परमेश्वर के तरीके को नज़रअन्दाज़ करते हैं। मत्ती १५:७-९, यूहन्ना ४:२३,२४, निर्ग २०:१-६; भजन २९:२; नीति १४:१२ ।

"देह को कष्ट देने"- कुछ लोग यह सोचते हैं कि अपनी देह को कष्ट देने से, उसके साथ बुरा व्यवहार करने से और सन्यास लेने से वे आत्मिक बन जाएंगे । संयम और देह को वश में रखना भला तो है, (१ कुरि ९:२७) किन्तु इसे हासिल करने के सभी तरीके परमेश्वर को स्वीकार नहीं है । पौलुस जिन बातों के विषय कहता है वे और न दूसरी बातें, मनुष्य को आत्मिक बना सकती हैं या पाप पर जीत दिला सकती हैं। केवल एक ही रास्ता है और वह यीशु मसीह के द्वारा है । इस विषय पर पौलुस अगले अध्याय में सिखाता है।

३:१,२ कुलुस्से में रहनेवालों पर झूठे शिक्षक कुछ दबाव ला रहे थे, जब कि मनुष्य की ज़रूरत है नया आत्मिक जीवन (२:४,८,१६-२३)

"मसीह के साथ जिलाए गए" २:१३; रोमि ६:४,५ इफि २:४-६ । विश्वासी मसीह में मर चुके हैं, जिन्होंने सभी के लिए अपने प्राण दिए थे । विश्वासी उनके साथ जिलाए गए । यह एक जीवित अनुभव हो गया, जब उन्होंने विश्वास से यीशु को स्वीकार किया

४ जीवन के लिए मर चुके हो और मसीह द्वारा स्वर्गिक पिता में तुम्हारा आत्मिक जीवन छिपा हुआ है। **जब** यीशु जो हमारा
५ जीवन हैं प्रगट होंगे, तब तुम भी उनके साथ बड़े तेज में प्रगट होगे । **इसलिए** इस पृथ्वी पर जो तुम्हारी शारीरिक लालसाएँ
है, जैसे यौन कामुकता, अशुध्दता, बुरी लालच, दुष्ट चाहत और लालच (जो मूर्तिपूजा है), इन सबको मार डालो।
६,७ **इन्हीं** कारणों से स्वर्गिक पिता का क्रोध उनकी आज्ञा न माननेवालों पर आता है। **एक** समय था, जब तुम इन सब में
८ जी रहे थे और अपना सारा समय इन्ही में गवां रहे थे । किन्तु अब तुम्हें ये सभी बातें अर्थात क्रोध, रोष कड़वाहट, निन्दा,
९ मुँह से निकलनेवाली गंदी बातें दूर कर देनी चाहिए। **एक** दूसरे से झूठ मत बोलो क्योंकि तुमने अपना पुराना जीवन उसके
१० कामों सहित दूर कर दिया है, **तुमने** अब नया जीवन शुरू किया है, जो सृष्टिकर्ता की समानता के ज्ञान में नया होता
११ जाता है । **जहाँ** यूनानी-यहूदी, खतनासहित-खतनारहित, बारबेरियन-स्कूती, गुलाम-आज़ाद में कोई अन्तर नहीं है । मसीह
१२ सब बातों में सबसे बढ़कर हैं और वह हम सब में रहते हैं। **इसलिए** यहोवा परमेश्वर के चुने हुओं की तरह पवित्र और

और नया जन्म पाया- १ यूहन्ना १:१२,१३ । मसीह पूरे अधिकार के साथ स्वर्ग में हैं - इफि १:२० फिलि.२:९, इब्रा १:३। वहीं पर प्रत्येक विश्वासी के विचार और इच्छाएँ होनी चाहिए। यीशु को खुश करने और पवित्र जीवन जीने का एक यही एक तरीका है । फिलि ४:८; रोमि ८:५ आदि से तुलना करें।

"चाहो" - या ध्यान लगाओ ।

"स्वर्ग की वस्तुओं" - फिलि ३:१९; १ यूहन्ना २:१६,१७,

३:३ ***"मर चुके हो"*** - रोमि ६:२- ४,८, गल २:२० ।

"जीवन" वह नया, आत्मिक जीवन जिसे परमेश्वर ने विश्वासियों को दिया है ।

"छिपा हुआ है" इस पृथ्वी पर कोई इसे देख नहीं सकता।इसे नाश करने के लिए कोई दुश्मन नहीं आ सकता (यूहन्ना १०:२८,२९)। हालाँकि मसीह में यह खज़ाना बहुत दूर लग सकता है, यह बहुत निकट और सुरक्षित है ।

३:४ मसीह सभी विश्वासियों के जीवन हैं - वह यह कि उनके पास यह नया, आत्मिक जीवन है क्योंकि मसीह उनमें है, १:२७, यूहन्ना ११:२५; रोमि ८:९,१०; १ यूहन्ना ५:११,१२,२०) वे उन्ही से जुड़े हुए है । (यूहन्ना १७:२०-२३), विश्वासियों की पूरी देह में उन्हीं का जीवन बह रहा है ।

"प्रगट" १ तिमो ६:१४; २ तिमो ४:१,८; तीतुस २:१३ इब्रा ९:२८; १ पत ५:४; यूहन्ना २:२८; ३:२।

"तेज में" - यूहन्ना १७:२४;रोमि ५:२;८:१७,१८; १यूहन्ना ३:१-३

३:५ ***"मार डालो"*** पद १-४ में जो महान सत्य हमारे सामने है, उन्हें के ऊपर पौलुस अपनी आज्ञा की नेंव रखता है । रोमि १२:१; इफि ४:१; और ५:१ से तुलना करें । मसीह में परमेश्वर ने विश्वासियों का नया जीवन दिया है । उनके पास अद्भुत भविष्य है। इसी आधार पर उनका व्यवहार होना चाहिए । उन्हें अपने जीवन में से दुष्टता को निकालना चाहिए, हालाँकि पापमय स्वभाव को निकाल फेंकना असंभव है। यदि यह संभव न हुआ होता तो, परमेश्वर के आत्मा से पौलुस ने विश्वासियों को यह करने के लिए न कहा होता । झुठे शिक्षकों (२:३३) के किसी तरीके से वे यह नहीं कर सकते थे। मसीह द्वारा दी गयी सामर्थ से, मसीह और उनकी आत्मा से वे यह कर सकते थे। देखें रोमि ८:४, १३ १४; गल ५:२२-२५; इफि ३:१६-२०।

"शारीरिक लालसाएँ"- यहाँ जिन बुराईयों के विषय पौलुस सूची देता है वे जन्म ही से इस तरह जुड़ी हैं, जैसे आँखें, हाथ पैर देह से जुड़े हैं । बड़ी निर्दयता से उनसे निबटना चाहिए मत्ती ५:२९,३०।

"लालच" या और अधिक चाहना - एक दुष्टता जो मसीहियों में भी बहुत पायी जाती है

"मूर्तिपूजा" इफि ५:५ । हमारे भीतर (मन की) मूर्तियाँ घृणित और खतरनाक हैं, जैसे बाहरी मूर्तियाँ है। देखिए, यहे. १४:३,४

३:६ ***"क्रोध"*** - इफि २:१-३, रोमि ३:६-१६

३:८ ***"दूर कर देनी"*** - इफि ४:२२-३२

३:९,१० ***"झूठ मत बोलो"*** इफि ४:२५; भजन १५:२; नीति १२:२२

"शुरू किया है" - जब लोग मन बदलते हैं। (मत्ती ३:२) और यीशु पर विश्वास लाते हैं, वे पुराने जीवन को त्यागते हैं, नए जीवन को शुरू करते हैं । तभी वे एक नया स्वभाव पाते हैं, नए लोग बन जाते हैं -२कुरि.५:१७ । यह नया स्वभाव परमेश्वर का "स्वरूप है"-यह आत्मिक, पवित्र और धर्मी है (इफि ४:२२-२४)। प्रत्येक विश्वासी को अपनी गलतियों, दुष्टता बुरी आदतों, बुरी इच्छाओं से निबटना है । इसका तरीका है कि उन्हें मार डालें ।

३:११ गल. ३:३८ सभी विश्वासियों के पास एक नया स्वभाव (नया मन) है, वे मसीह (पवित्र आत्मा) के साथ एक हो गए हैं ।

३:१२ ***"परमेश्वर के चुने हुओं"*** - २ कुरि ६:१६-१८, १ पत २:९,१०।

"पवित्र" - यूहन्ना १७:१७-१९ में नोट्स ।

"बहुत प्रिय लोगों" - इफि १:५, ३:१८,१९; ५:२५,२६; १ यूहन्ना ३:१

"ढाँक लो" या ***"पहन लो"*** रोमि १३:१४

"कोमल करुणा ....धीरज" -फिलि २:१; गल ५:२२,२३ ।

१३ बहुत प्रिय लोगों, अपने आप को कोमल करूणा, मन की दीनता, नम्रता और धीरज से ढाँक लो । **यदि** किसी से झगड़ा
हो तो एक दूसरे की सह लो और माफ करो । जिस तरह से मसीह ने तुम्हें क्षमा किया, तुम्हें भी एक दूसरे को करना
१४,१५ चाहिये । **इन** सभी बातों से अधिक, अपने आपको प्रेम से ढांक लो, जो सिध्दता का बन्धन है। **यहोवा परमेश्वर** की शान्ति,
१६ जिसके लिए तुम्हें इस देह में निमंत्रण दिया गया है, तुम्हारे मन में शासन करे । उन्हें सदा धन्यवाद देते रहो । **मसीह** का
वचन सारी बुध्दिमानी के साथ तुममें बना रहे, यीशु के लिए अपने मन में गाते हुए भजन और आत्मिक गीतों व्दारा एक
१७ दूसरे को सिखाते और समझाते रहो । **बोल-चाल** और कर्म में जो किया जाए, सब कुछ स्वामी यीशु के नाम में और उन्हीं के
१८,१९ द्वारा यहोवा परमेश्वर को धन्यवाद देते हुए करो । **पत्नियो,** अपने पतियों की बात मानो, क्योंकि यह यीशु को पसन्द है। **पतियो,**
२० अपनी पत्नियों से प्यार करो और उनके लिए किसी तरह की कड़वाहट न रखो । **बच्चो,** सभी बातों में अपने माता-पिता का
२१ कहना मानो, क्योंकि इस से यीशु को आनंद मिलता है । **पिता,** अपने बच्चों को चिढ़ मत दिलाओ, कहीं वे अपनी हिम्मत
२२ न खो दें । **सेवको,** संसारिक रीति से जो तुम्हारे मालिक हैं, हर बात में उनके आदेश का पालन करो । दिखाने के लिए
२३ या लोगों को प्रसन्न करने के लिए नहीं, लेकिन मन की ईमानदारी से यहोवा परमेश्वर का भय रखते हुए । **जो** भी तुम करते
२४ हो यह समझकर मन लगाकर यह जानकर करो, कि लोगों के लिए नहीं परन्तु यीशु के लिए कर रहे हो । **क्योंकि**
२५ तुम यीशु मसीह की सेवा करते हो, यह जान लो, कि तुम्हें मीरास का ईनाम यीशु से ही मिलेगा । **किन्तु** जो व्यक्ति गलत
४ करेगा, अपनी गलती के परिणाम को भुगतेगा । जग के स्वामी पक्षपाती नहीं हैं। **मालिको यह** जानते हुए कि स्वर्ग में तुम्हारे
२,३ एक स्वामी है, अपने सेवकों को सही मजदूरी दो। **धन्यवाद** के साथ प्रार्थना में सतर्कता से लगे रहो । **हमारे** लिए यह
बिनती करना कि मसीह के रहस्य और वचन के लिए यहोवा परमेश्वर एक द्वार खोलें । इसी वचन की सेवा के कारण मैं
४,५ कैदी हूँ । **ताकि** जैसा वचन मुझे देना चाहिए, मैं स्पष्ट रीति से दे सकूँ । **और** समय का सही उपयोग करते हुए बाहरवालों

३:१३ इफि ४:३२; मत्ती ६:१२,१४

३:१४ ***"इन सब बातों...... प्रेम से ढाँक लो"*** - यूहन्ना १३:३४; रोमि १२:१०; १कुरि १३; इफि ४:२; फिलि २:२; १यूहन्ना ३:१८; ४:७,८ । विश्वासियों में केवल प्रेम ही सिद्ध एकता को बनाए रख सकता है। इसके बगैर स्वार्थ झगड़े और पार्टीबाजी होवेगी ।

३:१५ ***"सृष्टिकर्ता की शान्ति"*** - यूहन्ना १४:२७; फिलि ४:६,७ हमारे जीवन में शान्ति को विराजमान होना चाहिए, उन्हीं से हमारे कार्य प्रेरित होने चाहिए। ऐसा कुछ हम न करें जो हमें डराए या हमारी शान्ति छीन ले । शान्ति एक कोमल फूल की तरह है । दुष्टता इसे मुर्झा देती है ।

"इस देह"- १कुरि १२:१२,१३ । इसी के प्रकाश में हम एक दूसरे के साथ बर्ताव करें - १ कुरि १:१०; फिलि २:२ ।

"धन्यवाद देते रहो" - १:२; २:७ ।

३:१६ इफि ५:१८-२० से तुलना करें । परमेश्वर के आत्मा से भरने और यीशु की शिक्षा (वचन) के हमारे अन्दर रखने में गहरा सम्बन्ध है ।

"बना रहे" इफि ३:१७ भजन ११९:११ । विश्वासियों को दिए गए यीशु के वचनों के वजन को देखें । भजन १:२, व्यव ६:६,७; यहोशू १:८ ।

"सिखाते और समझाते" सभी विश्वासियों को चाहिए कि वे एक दूसरे को सिखाएं और समझाएँ । यह तभी हो सकता है, जब हमारे भीतर यीशु की शिक्षा है।

३:१७ १कुरि १०:३१ से तुलना करें।

"स्वामी यीशु मसीह के नाम में" - उनके स्वभाव, शिक्षा और उनके अधिकार के अनुसार हम पृथ्वी पर उनकी जगह पर हैं। यहाँ हमारे लिए एक नियम है।यदि हम बिना उनके अधिकार कुछ कह नहीं सकते, कर नहीं सकते तो चुपचाप रहना चाहिए । विश्वासी इसी संसार में यीशु की जगह पर हैं । उन्हें अपनी मर्जी से नहीं जीना है ।

३:१८-२५ इफि ५:२२-६:८ और नोट्स देखें।

४:१ इफि. ६:९

४:२ इफि. ६:१८; लूका १८:१

"धन्यवाद" - १:१२; २:२७; ३:१५,१७; १ थिस्सु ५:१८ ।

४:३ इफि ६:१९,२०

"मसीह के रहस्य" १:२५-२७ पौलुस हम सभी के लिए एक नमूना है। वह सदैव ऐसे अवसर को ढूँढता था कि लोगों को मसीह के विषय बताएँ । वह अवसरों की तलाश में रहा करता था । दूसरों से प्रार्थना के लिए कहा करता था ।

४:४ ***"जैसा वचन मुझे देना चाहिए"*** हम अलग-अलग स्थितियों में तरह तरह के लोगों से मिलते हैं। कब कैसे बातें करें, हम नहीं जानते। इसके लिए हमें सही सोच प्रार्थना और अध्ययन की जरूरत है ।

४:५,६ विश्वासियों को चाहिए, कि सोचें कि उनके शब्दों और कार्यों का असर अविश्वासियों पर क्या होगा। बाहर के लोग जो हमसे सुनते और हममे देखते हैं, उसी से हमें जान सकते हैं। यदि हम दिए गए अवसरों पर लोगों को मसीह के विषय में नहीं बताते, तो हम उनके नरक जाने के ज़िम्मेदार होंगे।- प्रेरित २०:२५-२७ जब हम उनसे बातचीत करते हैं हमें दीनता और नम्रता से सबकुछ कहना चाहिए । हमें ईश्वरीय कृपा पर ज़ोर डालना चाहिए । भजन ४५:२ और लूका ४:२२ से तुलना करें ।

६ के साथ मैं, बुध्दिमानी के साथ बर्ताव कर सकूँ । **तुम्हारा** बोलना सदैव मीठा हो, उसमें दया भरी हो ताकि तुम यह जान
७ सको, कि लोगों को कैसे उत्तर दिया जाए । **मेरे** विषय में तुखिकुस तुम्हें समाचार देगा । मसीह में वह सज्जन भाई और
८ मेरे साथ काम करनेवाला विश्वासयोग्य सेवक है । **मैंने** इसी उद्देश्य से उसे तुम्हारे पास भेजा है, कि वह जान सके कि तुम्हारा
९ हालचाल क्या है और तुम्हारी हिम्मत बढ़ा सके । **उनेसिमुस** विश्वसनीय और भला व्यक्ति है, और तुम्हीं में से है । वे लोग
१० ही यहाँ पर होनेवाली सभी बातों को बतलाएंगे । **अरस्तिखुस** मेरा संगी कैदी और मरकुस (जिसके बारे में तुम्हें बताया
गया ।) जो बरनबास का भाई है, सलाम कहते हैं । यदि मरकुस तुम्हारे पास आता है, उसका स्वागत करो।
११ यीशु जो यूस्तुस भी कहलाता है, सलाम कहता है । ये तीनों यहूदी मत से आए हैं, जिन्होंने स्वर्गिक पिता के राज्य के
१२ लिए ईमानदारी से मेहनत की है - वे ऐसे लोग हैं, जिनसे मुझे तसल्ली मिलती है । **इपाफ्रास** भी जो तुममें से एक और
मसीह का सेवक है, सलाम कहता है । वह हमेशा बड़ी तत्परता से प्रार्थना में मेहनत करता है, ताकि तुम सृजनहार की
१३ इच्छा में सिध्द और पूरी तरह स्थिर बने रहो । **मैं** इस बात का गवाह हूँ कि लौदीकिया, हियरापोलिस के लोगों और तुम्हारे
१४,१५ लिए उसके पास बड़ी धुन है। **प्रिय** चिकित्सक लूका और देमास तुम्हें सलाम कहते हैं । **उन** भाईयों को सलाम कहना
१६ जो लौदीकिया में हैं और निम्फस के घर में मिलनेवाली मण्डली को भी । **जब** यह पत्र तुम्हारे यहां पढ़ा जाए, तो यह
१६ भी ध्यान रखना कि लौदीकिया के चर्च में भी यह पढ़ा जाए और इसी तरह तुम लोग लौदीकिया को लिखे गए पत्र को
१७,१८ पढ़ना । **अर्खिप्पुस** से कहना, "ध्यान रहे कि वह यीशु से मिली हुयी सेवा को पूरा करे । **यह** अभिवादन मैं पौलुस स्वयं
अपने हाथों से लिख रहा हूँ । मेरी जंजीरों पर ध्यान दो । तुम पर दया बनी रहे । ऐसा ही हो ।

नमक के दो अर्थ हो सकते हैं। नमक से स्वाद आता है। हमारी बातचीत से लोगों में सुनने की दिलचस्पी बढ़नी चाहिए। नमक सड़ाहट को रोकता है। लोगों की खराब भाषा का उपयोग हमें नहीं करना चाहिए।

४:७ ***"तुखिकुस"*** इफि ६:२१

४:८ ***"हिम्मत"*** २:२

४:९ ***"उनेसिमुस"*** -२:२, फिलेमोन १०:१२,१६

४:१० ***"अरिस्तर्खुस"*** - प्रेरित १६:२९; २०:४; २७:२; फिलेमोन २४।

"कैदी" - पद १८; इफि ३:१; फिलि १:१३।

"मरकुस" - प्रेरित १२:१२,२५; १३:५,१३; १५:३७-३९, २ तिमो ४:११; फिले २४; १ पत ५:१३।

४:११ यहोशू नाम, ग्रीक में यीशु था और बहुत से लोग इस नाम को नहीं रखते थे।

"स्वर्गिक पिता के राज्य" - मत्ती ४:१७; रोमि १४:१७ के नोट्स देखें।

४:१२,१३ ***"इपाफ्रास"*** -१:७।

"बड़ी तत्परता से प्रार्थना" - २:१ यह स्वयं उसके लिए नहीं, किन्तु दूसरों के लिए था। वह उनके लिए आत्मिक जीत को हासिल करना चाहता था। प्रायः देह की कमज़ोरियों और आत्मिक क्षेत्र में विरोध के कारण आत्मिक कुश्ती की ज़रूरत पड़ती है - मत्ती २६:४०,४१; इफि ६:१२। उत्पत्ति ३२:२४-३२ से तुलना करें। इपाफ्रास विश्वासियों के लिये बहुत ज़रूरी बातें चाहता था - वे बातें जिनकी ज़रूरत आज विश्वासियों को है । वह चाहता था कि वे स्वर्गिक पिता की मर्जी को जानने की योग्यता रखें, उसमें बने रहें (१:९,१०), और आत्मिक समझदारी का आनंद उठायें (इफिसियों ४:१३-१५) । ***"हमेशा"*** शब्द के ऊपर ध्यान दें ।

"लौदीकिया"-पद १५,१६;२:१ ।

४:१४ ***"लूका"***- फिलेमोन २४; २तिमोथी ४:११, लूका गैरयहूदी था (पद ११ से तुलना करें) । वह 'प्रेरितों के काम' और 'लूका सुसमाचार' का लेखक है । यही एक जगह है जहाँ उसे डॉक्टर बताया गया है ।

"देमास"-फिलेमोन २४; २तिमोथी ४:१० ।

४:१५,१६ ये एक तरीका था जिससे पौलुस की चिट्ठियाँ (और बाईबल के दूसरे अंश) दूसरी मण्डलियों में प्रचलित हो सके । याद रखें, कि उन दिनों में प्रिंटिग प्रेस या दूसरी मशीने नहीं थीं ।

४:१७ ***"अर्खिप्पुस"*** -फिलेमोन २ । प्रत्येक विश्वासी को यह देखना चाहिये, कि वह उस काम को पूरा करे जो यीशु ने उसे करने के लिये दिया है। तुलना करें, प्रेरित २०:२४; २तिमोथी ४:७

४:१८ ***"अपने हाथों"*** -१ कुरि. १६:२१; गलतियों ६:११; २थिस्स. ३:१७ ।

"जंजीरों"-पद १० ।